प्रभु का प्रकाश

– मूलशंकर भट्ट

बच्चों की कहानियां

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

हमारी बात

हमारे देश की संस्कृति दुनिया में सबसे पुरानी और काफी समृद्ध है। मगर आपसी झगड़ों, जलन और बैर की वजह से हम कमज़ोर हो गये हैं और इसी वजह से डरी-सहमी हालत में जी रहे हैं। नये ज़माने की शिक्षा भी हमें सुधार नहीं पाई है। इसीलिए इस कमज़ोर और ख़तरनाक हालत से हम उबर नहीं पा रहे हैं। फिर भी यह हक़ीक़त है कि हमारी संस्कृति अत्यंत जीवंत है, कभी मिट नहीं सकती है।

दूसरे प्राणियों के मुक़ाबले आदमी में यह एक विशेषता है कि उसमें धर्म की सूझबूझ है। अच्छा-बुरा, धर्म-अधर्म परखने का उसे विवेक है। मैं तो इसे ही सच्चा धर्म मानता हूं। 'धर्म' वही है जिससे आदमी का सुखी, सार्थक जीवन बनता है। धार्मिक इन्सान समझता है कि दूसरों के सुख में उसका भी सुख है। दूसरों को तबाह करके कोई सुखी नहीं हो सकता। दूसरों के दुःख से जो सुख उठाता है, वह अधर्मी है।

सच्चाई और अहिंसा, धर्म पर चलने के दो रास्ते हैं। दुनिया के सभी धर्मों में इन दो बातों पर ज़ोर दिया गया है। हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, ईसाई, पारसी, जैन, सिख आदि सभी धर्मों के पैग़म्बरों ने धर्म के जिन आदर्शों की बात कही है, वह हर इन्सान के लिए समान रूप से लागू होती है। हमारे देश की परंपरा में सब धर्मों के लिए इज़्ज़त की भावना रही है। हिन्दू धर्म का दायरा बहुत बड़ा और सबका भला चाहनेवाला रहा है। अफ़सोस है तो इस बात का कि हम लोगों में एक के बाद एक कमज़ोरियां आती गईं और एक उदार धर्म की अनमोल दौलत हम संभाल नहीं सके।

आज इस बात की ज़रूरत है कि दुनिया के विकसित धर्मों में हमारे लिए जो आवश्यक बातें कही गयी हैं उन्हें हम समझें और अपने जीवन में उन पर चलने की कोशिश करें।

नई पीढ़ी को सही समझ और शिक्षा देने के लिए ऐसे विचार उनके सामने रखना जरूरी है जिससे वे आदर्शों की तरफ प्रेरित हों और ज़िन्दगी का सही रास्ता उन्हें मिल सके।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने इसी उद्देश्य से दुनिया के मुख्य धर्मों में जो शिक्षाप्रद कहानियां हैं, बड़े-बड़े संत-पैग़म्बरों की ज़िन्दगी में जो सच्ची घटनाएं हुई हैं, उन्हें लेकर एक सौ सचित्र पुस्तकें छापने की योजना बनाई है।

कहानियां इस तरह रखी गयी हैं कि बच्चों को वे उपदेश नहीं, जीवन से जुड़ी हुई मालूम हों और आसानी से समझ में आ जायें। मुझे उम्मीद है कि बच्चों के माता-पिता भी इन कहानियों को दिलचस्पी से पढ़ेंगे और अपने जीवन को समृद्ध करेंगे।

मुझे उम्मीद है कि इस कोशिश को पसन्द किया जायेगा, इस पर अमल किया जायेगा और इसका प्रचार किया जायेगा।

मोरारजी देसाई

अध्यक्ष,
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

संपादक : मूलशंकर भट्ट बच्चों की कहानियां–१९

प्रभु का प्रकाश

मूलशंकर भट्ट

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

© हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, १९८१

मूल्य :
दो रुपये

मुद्रक :
अकील दीवानजी
ऑनलुकर प्रेस
१६, सासुन डाक
कोलाबा, बम्बई–४०० ००५

प्रकाशक :
वाडीलाल डगली
मानद मंत्री
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
महात्मा गांधी मेमोरियल बिल्डिंग
बम्बई–४०० ००२

एकमात्र विक्रेता

एस० चन्द एन्ड कंपनी लि०
मुख्य कार्यालय : रामनगर, नयी दिल्ली-११००५५
शो रूम : ४/१६-बी, आसफ अली रोड, नयी दिल्ली-११०००२

शाखाएं :

अमीनाबाद पार्क, लखनऊ -२२६००१
२८५/जे, बिपिनबिहारी गांगुली स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००१२
सुल्तान बाजार, हैदराबाद-५०००००१
३, गांधी सागर ईस्ट, नागपुर-४४०००२
खजांची रोड, पटना-८०००४
माई हीरां गेट, जालन्धर-१४४००८
१५२, अन्ना सलाए, मद्रास-६००००२
ब्लैंकी हाउस, १०३/५, वालचन्द हीराचन्द मार्ग, बम्बई ४००००१
के० पी० सी० सी० बिल्डिंग, रेसकोर्स रोड, बंगलोर-५६०००९
६३१-७ महात्मा गांधी रोड, एरनाकुलम, कोचीन-६८२०११

प्रभु का प्रकाश

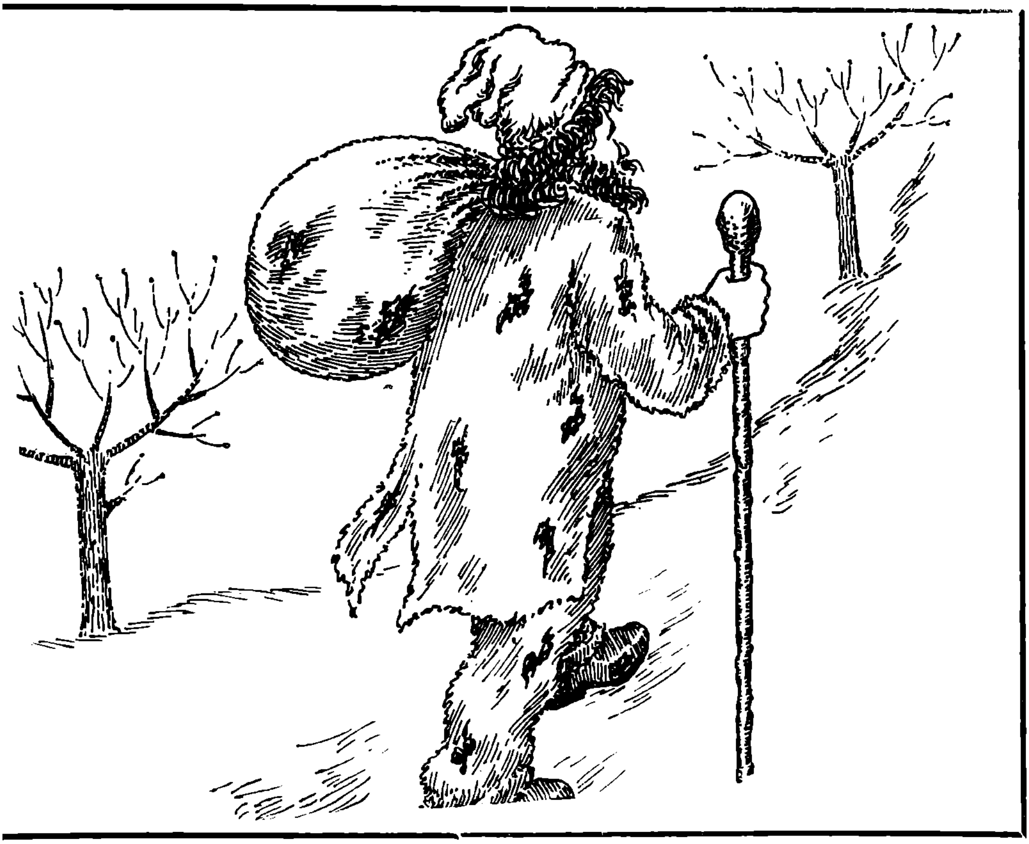

ो की ठंडी पड़ रही थी। सूरज भी ठंड के घबराकर जल्दी-जल्दी डूब था। फ्रांस देश के एक छोटे से कस्बे लोग अपना-अपना काम जल्दी ाकर घर की ओर भाग रहे थे। आल्प्स पर्वत की बर्फों को छूकर हवा, तीर की तरह बदन को छेद रही थी।

ऐसे वक्त शहर के बाहर की सड़क पर एक तगड़ा मगर फटेहाल आदमी चला जा रहा था।

उसके कंधे पर एक बड़ी पोटली थी। हाथ में गांठवाला बड़ा-सा डंडा था। उसका लंबा अंगरखा, उसकी पतलून,

उसके सिर का बड़ा टोपा, सबमें बड़े-बड़े छेद दिखायी देते थे। उसके उलझे बाल, चिड़िया के घोंसले जैसी दाढ़ी, उसकी गहरी धंसी हुई आंखें, सब किसी कमजोर दिल इंसान को डराने के लिए काफी थीं। फटे कोट से झांकनेवाली उसकी बांह, पतलून से दिखायी पड़ते पांव ऐसे लगते थे मानो लोहे के बने हों। वह बहुत थका हुआ लग रहा था।

वह बार-बार गहरी सांसें भर रहा था। वह या तो भूख से, या दुःख से या दोनों से परेशान मालूम देता था।

नजदीक ही एक ढाबा था।

उसके पैर ढाबे की ओर बढ़ रहे थे। ढाबे का मालिक चूल्हे पर तवा और पतीली चढ़ाकर गर्म-गर्म खाना पका रहा था। चूल्हे के कारण सारा कमरा सुखद गर्मी दे रहा था। कई ग्राहक अपनी थाली के आने की बाट देख रहे थे और कमरे की गरमाहट का मजा लूट रहे थे।

वह मुसाफिर भीतर आया। अपना थैला उसने कंधे से उतारकर रखा और बैठ गया। कमरे की गर्मी से उसे थोड़ी शांति मिली।

वह बोला, "सेठ, एक थाली मेरी परोसना।"

सेठ तो रसोई बनाने में मशगूल था। उसने ग्राहक की तरफ सर उठाकर देखा भी नहीं और बोला, "अभी-अभी सब तैयार होता है, गरमागरम !"

"पैसे तो आप जो कहेंगे, दूंगा। मेरे पास हैं। देखिये !"

पैसे की बात सुनकर सेठ ने ग्राहक की ओर देखा। भूत के भाई जैसे इस आदमी को देखकर एक बार तो वह चौंक पड़ा। उसे घूर-घूरकर देखने लगा। क्या ग्राहक ऐसा हो सकता है? क्या ऐसे

ग्राहक के पास पैसे हो सकते हैं ? यह तो कोई डाकू मालूम देता है ।

उसने अपनी दूकान में काम करनेवाले एक लड़के के कान में कुछ कहकर उसे कहीं भेज दिया । लड़का दौड़ता हुआ पुलिस थाने गया और वापस आया । उसने सेठ के कान में कुछ कहा ।

ढाबे का मालिक हाथ में रसोई की कलछी लेकर आया । एक हाथ में कलछी लेकर और दूसरा हाथ कमर पर रखकर वह उस मुसाफिर के मुंह के करीब जाकर तेज आवाज में बोला, "सेठ, यहां से बाहर निकलो । यह किसी के बाप का घर नहीं है । यहां तुमको खाने को कुछ नहीं मिलेगा । तेरी सब करतूत हमें मालूम हो गयी है । पुलिस ने हमें सारी जानकारी दे दी है । यह ढाबा चोर-डाकुओं के लिए नहीं है । निकल बाहर अभी !"

"मगर मेरे पास पैसे हैं ।"

"अरे, पैसे हमने बहुत देखे । कहीं से डाका डाल लाया होगा । भाग, जल्दी भाग यहां से, नहीं तो पुलिस बुलाता हूं," और उसने कलछी उठा ली ।

मुसाफिर भारी निःश्वास के साथ

उठा । कंधे पर थैला लादा और भारी डग से ढाबे की सीढ़ियां उतर पड़ा ।

ठंड बहुत बढ़ गयी थी । रात का अंधेरा भी घिरने लगा था । मुसाफिर इस गांव के लिए अनजान मालूम पड़ता था । वह एक-दो दूसरे ढाबों में गया । सब जगह उसने खाना मांगा । मगर बात सारे शहर में फैल गयी थी । किसी ढाबेवाले ने उसे खाने और रात को ठहरने नहीं दिया ।

भूख और थकान की दुहरी मार से उसका फौलादी शरीर चूर-चूर हो रहा

था और अब उसकी बर्दाश्त करने की सीमा आ गयी थी।

सड़क किनारे एक छोटा-सा घर था। खिड़की की कांच में से देखा तो एक सुखी पति-पत्नी अपने बच्चे से खेलते हुए खा-पी रहे थे। बच्चा बीच-बीच में खुशी से किलकारी मार रहा था।

मुसाफिर ने खिड़की से झांककर कहा, " भाई साहब, इस भूखे को कुछ दीजिए। भूखा मर रहा हूं। थोड़ी दया कीजिए।"

उस आदमी को दया आ गयी। उसने अपने खाने में से कुछ उठाया और खिड़की के पास जा ही रहा था कि उसकी पत्नी ने उसका हाथ पकड़ लिया और उसके कान में कुछ कहा। पत्नी की बात सुनकर उस आदमी ने हाथ का खाना टेबल पर रख दिया और कोने में रखी बंदूक उठा ली।

बंदूक लेकर वह खिड़की के पास आया और उस मुसाफिर का निशाना लेकर बोला, " निकल यहां से डाकू ! दूर हो जा, नहीं तो अभी गोली दाग दूंगा।"

रात तेजी से घिरती आ रही थी। अंधकार गाढ़ा हो रहा था। ठंड अपना कातिल रूप प्रकट कर रही थी। खाने की बात तो छोड़ो, अब तो रात में ठहरना कहां, यही एक बड़ा सवाल हो गया था।

उसने एक खाली अहाते के कोने में, एक छोटा-सा घरौंदा देखा। वहां जाकर उसने और कुछ न सोचा। नीचे झुका और किसी तरह उस छोटे से घरौंदे में घुसकर, हाथ-पैर समेटकर पड़ रहा।

थोड़ी देर में एक डरावना कुत्ता जोर से भौंकता हुआ, उस घरौंदे में पहुंचा।

अपने घर में किसी को घुसा देखकर वह गुर्राने लगा और फिर अचानक उसने मुसाफिर पर हमला कर दिया। उसके फटे कपड़े और भी बुरी तरह फट गये। बड़ी मुश्किल से जान बचाकर मुसाफिर वहां से भाग निकला।

भागते-भागते वह गांव के दूसरे छोर पर जा पहुंचा। वहां बड़े-बड़े बंगले, कचहरी के मकान आदि मिले। रास्ते पर कोई आदमी नहीं दिखायी पड़ता था। वह पत्थर की एक बेंच पर जा बैठा।

सामने से एक बुढ़िया आती हुई दिखायी दी। उसे खुले में सोया देखकर वह बोली, "अरे भाई, पागल तो नहीं हुए हो? ऐसी सर्दी में क्या खुले में सोया जाता है? किसी धर्मशाला या ढाबे में जाकर सोओ।"

"बूढ़ी मां, अब तुम सर मत खाओ। मुझे यहां सोने का कुछ शौक नहीं है। लेकिन इस गांव में किसी के पास इतनी दया बची ही नहीं है कि मुझे रात भर टिका सके।" मुसाफिर चिढ़कर बोला।

"अरे भाई, तुम्हारे साथ ऐसा बुरा बर्ताव हुआ! तू सब जगह घूम चुका और तुझे किसी ने सहारा नहीं दिया?"

बुढ़िया की बात से ऊबकर मुसाफिर बड़बड़ाने लगा, "अब अपनी बेमतलब टरटराहट बंद कर बुढ़िया!"

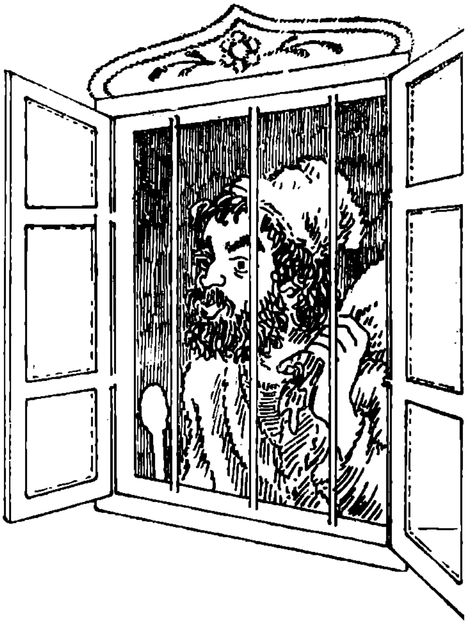

"बेटा, देख, सामने जो बड़ा-मकान दिखायी पड़ता है न, क्या तू व जाकर आया है?" बुढ़िया ने पूछा।

"नहीं।"

"तब मेरा कहना मान और व चला जा। वहां कोई किसी से ना न कहता है। उधर रहनेवाला देवता सरी है," इतना कहकर बुढ़िया ने सिक्के जै कुछ उसके हाथ में रख दिया, "मेरे प अभी इतना ही है। इससे कुछ खा लेना बुढ़िया चली गयी।

मुसाफिर ने फिर अपनी हिम्मत इकट्ठा करके कोशिश करने की सोची। वह उठा और धीरे-धीरे चलता हुआ उस मकान के पास पहुंचा।

उस मकान में एक वृद्ध ईसाई रहते थे। आसपास के इलाके में वे पादरी महाशय एक संत की तरह पूजे जाते थे। उनका हृदय दया से भरा था। अपना महल जैसा बंगला उन्होंने दुखियों के दवाखाने के लिए दे दिया था और खुद इस छोटे मकान में रहते थे।

वे कहते थे, "हमें चाहिए ही कितनी जगह? और ये बहुत सारे दुखी, बेचारे इतने छोटे मकान में पड़े रहें, यह कहां का न्याय है!"

वे रोज सबेरे घोड़े पर बैठकर निकल पड़ते। गांव में घूमते और गांव के भोले-भोले लोगों से उनके सुख-दुःख की बातें सुनते। उनको उचित सलाह देते। किसी को पैसों की मदद भी देते।

उनको बच्चे बड़े प्रिय थे। बच्चों को इकट्ठा कर वे उन्हें ईशु और दूसरे संतों की कथा सुनाते। बच्चों को कुछ-न-कुछ खाने को देते। उनके घर पर अमीर-गरीब सबका एक-सा आदर होता था। कोई भी अनजान आदमी उनका दरवाजा कभी भी खटखटा सकता था।

किसी ने दरवाजा खटखटाया नहीं कि भीतर से पादरी की मीठी आवाज सुनायी पड़ती, "आइए।"

पादरी के यहां एक नौकरानी काम करती थी। उसने कस्बे में फैली बात सुनी थी कि एक खतरनाक डाकू घूम रहा है।

उसने पादरी की बहन को भी यह बात बतायी थी, "हम रात को सभी खिड़की-दरवाजे बंद कर लेंगे और भीतर से ताला लगा देंगे। ताला नहीं होगा तो ऐसे चोर दरवाजे में हाथ डालकर भी खिड़की खोल लेते हैं। चोरों को सभी तरीके मालूम होते हैं। अपनी अलमारी में चांदी की जो थालियां और चिरागदान रखे हैं, उन सबको तहखाने में कहीं छिपा देंगे हम। पिताजी को यह बात मत बताना। उनका स्वभाव तो जैसा है, वह तुम जानती हो। अगर कोई आदमी दरवाजा खटखटायेगा तो वे तुरंत बोल उठेंगे, "आइए।"

ठीक उसी समय दरवाजे पर जोर से कुछ खटखटाया। पादरी बैठे-बैठे कुछ पढ़ रहे थे। उनके मुंह से सहज ही निकल पड़ा, "आइए।"

दरवाजा खुला। एक भयानक आकृति दरवाजे में खड़ी थी। दोनों महिलाएं एक-दूसरे के पीछे छिप गयीं और आंखें फाड़कर देखने लगीं।

पादरी उठ खड़े हुए और बोले, "आइए, दरवाजे में क्यों खड़े हैं? यह घर अपना ही समझिए।"

मुसाफिर पहले तो आश्चर्यचकित सबकुछ देखने लगा, फिर बोला, "क्या यह भोजनालय है? क्या इधर खाना मिलेगा? मेरे पास पैसे हैं भाई। मैं मुफ्त में खाना नहीं चाहता। क्या यहां रातभर सोने की जगह मिलेगी? मैं तो मारे भूख से मर रहा हूं। मेरा हर अंग थकावट से चूर हो रहा है," इतना

कहते-कहते वह बेसुध होकर कुर्सी पर बैठ गया।

"बहन, एक थाली ज्यादा तैयार करो, जल्दी। मेहमान अपने साथ ही खाना खायेगा," पादरी ने आगे बढ़कर मुसाफिर के कंधे पर हाथ रखा और कहा, "भाई, इधर खाने-सोने के लिए सबकुछ मिलेगा। यह तो भगवान का दरबार है। तुम्हें कुछ भी चिंता करने की जरूरत नहीं है।"

मुसाफिर ने ऐसी भाषा, 'भाई' जैसा संबोधन अपने जीवन में आजतक नहीं सुना था। वह बड़े असमंजस में था। क्या बोलना, कैसे बोलना उसकी समझ में नहीं आ रहा था। मगर 'भाई' के संबोधन ने उसके दिल को हिला दिया। उसके कठोर दिल के नीचे कुछ कोमलता फूटने लगी।

वह पागलों की तरह अंट-संट बकने लगा, "उन्नीस-उन्नीस साल से जहाज के तल में, जंजीर से बांधकर रखा गया हूं। रात-दिन पतवार की मार खा-खाकर शरीर टूट गया है। चाबुक की मार से शरीर छलनी हो गया। अक्सर फव्वारे की तरह लहू की धार शरीर से फूट पड़ती थी। सारा दिन गालियां सुनते बीतता था। सोने लिए लकड़ी का तख्ता और खाने में घास-पात।

"इस तरह उन्नीस साल निकाले मैंने। अभी-अभी छूटा हूं। सारे गांव में घूमा। न किसी ने मुझे खाने को रोटी दी, न ठहरने को जगह। मुझ जैसे चोर-डाकू को कौन देगा यह सब? अगर आप भी मुझसे डरते हों और ना कहना चाहते हों तो आप भी मना कर दीजिए।"

"बहन, अब खाना परोसने में कितनी देर है?", पादरी गंभीर आवाज में बोले।

"खाना तैयार है भैया!", भीतर से बहन की आवाज आयी।

"चलो भाई, हाथ-मुंह धो लो। खाने को अब बैठ ही जायें।"

दोनों रसोई घर में आये। टेबल पर थालियां परोसी थीं। मुसाफिर भोजन करने बैठा गया। बगल में पादरी भी बैठा। पादरी आंखें मूंदकर प्रार्थना करने लगा। मगर मुसाफिर तो भोजन पर टूट ही पड़ा। जिंदगी में कभी उसने ऐसा खाना नहीं देखा था।

बचपन में ही उसके मां-बाप मर चुके थे। मेहनत-मजदूरी से बड़ी मुश्किल से पेटभर खाना मिलता था। अपने साथ-

साथ अपनी विधवा बहन के बच्चों का पेट पालना भी उसकी ही जिम्मेदारी थी। भूख से उन बच्चों का विकल होना, रोना उससे सहा न जाता था।

एक दफा एक दूकान में आंख बचाकर उसने एक रोटी उठा ली। लेकिन उसमें भी पकड़ा गया। जेल जाना पड़ा। बहन के बच्चों की उसे बड़ी चिंता थी। उनका क्या होगा, यही सोचकर वह जेल से भाग निकला। फिर पकड़ा गया। फिर भागा। और आखिर वह ऐसा बड़ा खतरनाक गुनहगार माना जाने लगा कि कुल मिलाकर उसे उन्नीस साल की कैद मिली। वह पक्का अपराधी बन गया था।

देखते-देखते उसने सारा खाना खा लिया।

"बहन, थोड़ा और लाना।"

घर में जितना खाना पकाया था, बहन ने सब उसकी थाली में लाकर परोस दिया। मुसाफिर ने डटकर खाना खाया, खूब पानी पीया।

संतुष्ट होकर बोला, "खाना बहुत अच्छा लगा। जो कुछ पैसा इसका मुझे देना है, मैं दे दूंगा। मैंने उन्नीस साल तक जेल में सच्ची कमाई की है। ये मेरे हक के पैसे हैं, चोरी के नहीं हैं साहब।"

खाते-खाते मुसाफिर ने देखा कि सामने की तिजोरी में चांदी की थालियां हैं और टेबल पर चांदी के दो चिरागदान हैं, जिनमें जलती मोमबत्तियों से कमरे में प्रकाश फैल रहा है।

खाना खत्म कर पादरी भी उठे। वे मुसाफिर को, मेहमान के कमरे में, उसके बिस्तरे के पास ले गये।

"अब आप इधर आराम कीजिये। सुबह हम फिर मिलेंगे और साथ में जलपान करेंगे" कहकर पादरी ने आमीन कहा और सीने पर क्रौस का निशान किया।

पादरी के जाने के बाद मुसाफिर बिस्तर पर लेट गया। नरम-नरम गद्दी पहले तो उसके शरीर को कुछ भायी नहीं, मगर थकावट और नींद की अधिकता से वह तुरंत ही गहरी नींद में डूब गया।

आधी रात का घंटा बजा और एकाएक उसकी आंखें खुल गयीं। मकान में पूरी शांति थी। पास के कमरे में पादरी गहरी नींद सो रहे थे। दोनों औरतें मकान के ऊपर की मंजिल पर सोयी हुई थीं।

मुसाफिर उठ खड़ा हुआ। उसकी

आंखों के सामने से चांदी की वे चमकती थालियां हटती नहीं थीं।

इतने साल तक वह चोरों, डाकुओं और खूनियों के बीच रहा था। किसी भी चीज को उठा लेना, चोरी करना वह पाप मानता ही नहीं था। उसके लिए वह बात सहज, बिलकुल सहज थी। मगर चोरी करते हुए किसी भी हालत में, कभी भी पकड़ा नहीं जाना है, यह उसका पक्का विचार बन गया था।

वह चुपके से पादरी के कमरे से होता हुआ रसोई घर में गया। चांदी की थालियां उठायीं और तनिक भी आवाज किये बगैर, वापस चला आया। अपने थैले में उसने चांदी की थालियां रखी, डंडा उठाया और खिड़की खोलकर बड़े चुपके से बाहर कूदा। फिर उसने मकान की दीवार फांदी और दौड़ने लगा। गहरी अंधेरी रात में उसे किसी का डर था भी नहीं। उसके पैरों में ताकत थी, पेट में अनाज पड़ा था।

देखते-देखते वह अंधेरी रात में अदृश्य हो गया।

सुबह हुई। घर में सब जागे। मेहमान अपने बिस्तर पर नहीं था। तिजोरी में थालियां नहीं थीं। खिड़की खुली थी। दीवार के ऊपर की कुछ ईटें उखड़ गयी थीं। सबकी समझ में सबकुछ आ गया।

काम करनेवाली बाई ने पादरी की बहन के कान में कह भी दिया, "मैं तो पहले से ही बोल रही थी कि ऐसे आदमी को सहारा नहीं देना चाहिए। ऐसे लोग तो खा भी जाते हैं और खोद भी लेते हैं। अब जब कोई बड़े मेहमान आयेंगे तो उनको किस थाली में परोसेंगे हम? और बापूजी को यह बात समझायी भी जाये तो कैसे?"

बहन से न रहा गया। भाई से कहने लगी, "मेहमान तो रात को ही चले गये दीखते हैं। मगर खिड़की खुली है और ईटें भी झड़ गयी हैं इसलिए, भागकर गये हैं, ऐसा लगता है। अपनी चांदी की थालियां भी तिजोरी में नहीं हैं। मुझे लगता ही था कि आज रात को कुछ अनहोनी होनेवाली है। अब क्या किया जाये? क्या पुलिस में खबर कर दें?"

"जाने दो। बेचारे मेहमान को खिड़की से कूदने में और दीवार फांदने में कितनी तकलीफ हुई होगी! दरवाजा खोलकर गये होते तो अच्छा होता। पुलिस को खबर करने की कुछ जरूरत

नहीं है। बेचारा मेहमान वैसे ही चला गया। नाश्ता भी नहीं किया। नाश्ता करके गया होता तो अच्छा होता। थालियां उठाकर ले जाने के बजाय, मांगकर ले गया होता तो अच्छा होता। जाने दो। जिसको जो अच्छा लगा, उसने वैसा किया।"

इतने में बाहर सीढ़ियों पर कई जूतों की आवाज सुनायी पड़ी। दरवाजे पर किसी ने दस्तक दी। नियम के मुताबिक पादरी की आवाज सुनायी पड़ी, "आइए।"

दरवाजा खुला।

चार-पांच पुलिस और जमादार ने पादरी को सलामी दी। इन सबके बीच कल आधी रात को आया मेहमान हथकड़ी पहने खड़ा था।

पादरी ने उसकी तरफ देखा। मेहमान की नजरें नीचे झुकी थीं।

"बापूजी, दूर जंगल में यह चोर पकड़ा गया है। इसके थैले में से चांदी की ये थालियां निकली हैं। सब जानते हैं कि ये थालियां आपकी ही हैं। अब जैसा आप फरमायें, वैसा हम करें।" जमादार बोला।

"सबसे पहले इसकी हथकड़ियां निकाल दो," हुक्म-सा देते हुए पादरी ने कहा।

पादरी धीरे कदमों से आगे बढ़े। पुलिस दोनों ओर से हट गयी। पादरी मेहमान के पास गये। उसके कंधे पर हाथ रखा। कैदी ने धीरे-धीरे मुंह ऊपर उठाया।

पादरी ने उससे आंख मिलायी। उनकी आंखों से मानो प्रेम का पवित्र प्रवाह ही बह रहा था। कैदी की आंखों से अनायास आंसू बहने लगे।

"भाई, रात में इस तरह चले जाने की जरूरत न थी। और मेरे लिए ये थालियां जरूरी भी नहीं हैं। ये तो तुम्हारी ही हैं। पुलिस भाई, आप इनको चोर समझकर पकड़ लाये मगर ये तो मेरे मेहमान हैं। आप सब अब जाइए।"

पुलिस ऐसे बदमाश का कचूमर निकालना चाहती थी मगर मौका न मिलने पर नाराज होकर, मुंह बिचकाकर चली गयी।

"आप मुझे जानते नहीं हैं? मैं

चोर हूं, डाकू हूं। मुझे पकड़वा दीजिए। मुझे जेल में वापस भेज दीजिए। आप मुझे भाई मत कहिए। मुझसे यह सहा नहीं जाता। मुझे डाकू, बदमाश, गुंडा कहकर पुकारिये।" वह आदमी अंट-संट बकने लगा।

पादरी बड़े प्रेम से उसकी पीठ सहलाते हुए बोले, "मैं तुम्हें ठीक से जानता हूं। तुम मेरे भाई हो। तुम भटके हुए थे। अब तुम वापस अपने भाई के घर आ गये हो। तुम उन्नीस वर्षों का अपना नीच जीवन भूल जाओ।

"तुम भी मेरे जैसे ही आदमी हो। जिस भगवान ने मुझे बनाया है,

उसी ने तुमको भी बनाया है। तुम्हें जो कुछ दुःख भुगतना पड़ा, दुःख देनेवाले उन लोगों को दिल से माफ कर दो। तुमको चांदी की थालियां मैंने दी हैं, उसके बदले में, तुम्हें भी मुझे कुछ देना पड़ेगा", पादरी हंसते-हंसते बोले, "बोले, दोगे न?"

"जरूर दूंगा। आप जो कहेंगे वह दूंगा।" मुसाफिर की आवाज में पहली बार कोमलता झलकी थी।

"बस, वाह, सचमुच तुम मेरे भाई हो! और देखो, एक काम तो अभी बाकी रह गया। अरे बहन, चांदी के दोनों चिरागदान लाओ तो।"

बहन दोनों चिरागदान लेकर आयी। पादरी ने चिरागदान हाथ में लेते हुए कहा, "अपना थैला लाओ।"

दोनों चिरागदान थैले में रखकर कहा, "अब बदले में जो मैं मांगूं, वही तुम्हें देना होगा। ठीक है न?"

कैदी ने सिर हिलाकर सम्मति दी।

"आज से तुम फिर मनुष्य का जीवन शुरू करते हो, ऐसा मान लो। तुम्हें नया जन्म मिला है। मुझे इतना वचन दो कि तुम प्रामाणिक जीवन बिताओगे। किसी की चीज चोरी नहीं करोगे, किसी को सताओगे नहीं, किसी को दुःखी देखकर खुश नहीं होगे। दीन-दुखियों की मदद करोगे।

"और जब-जब तुम्हारे मन में, अपने अंधकार भरे जीवन की गहरी छाया घिरने लगे, तब मैंने चांदी के जो चिरागदान दिए हैं, उन्हें याद करना। उन चिरागदानों से तुम्हें प्रभु का प्रकाश मिलता रहेगा। अब जाओ, इस दुनिया में नया जन्म लेकर, अपनी जीवन-नौका चलाते, बढ़े जाओ। भगवान तुम्हारा भला करेंगे।"

पादरी ने सीने पर क्रौस का निशान बनाया।

मुसाफिर ने अपने नये जीवन की शुरुआत की और उसी ढंग से क्रौस का निशान उसने भी बनाया, और विह्वल स्वर में बोला, "आमीन!"

गहन अंधकार से प्रकाश की तरफ एक नया सफर शुरू हुआ! ●

हमारे आगामी प्रकाशन

- कृष्ण का गोवर्द्धनधारण
- अचल आख्यान
- हक की रोटी
- श्वेतकेतु
- प्यारे नबी
- घास के मूसल
- द्रोण-द्रुपद
- बलि का बकरा
- हज़रत राबिया बसरी
- सेवा की राह

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की स्थापना 1938में महात्मा गांधी की प्रेरणा तथा पेरीन बहन केप्टन के सद्प्रयत्नों से हुई थी। इस संस्था की कोशिश ऐसी राष्ट्रभाषा विकसित करने की रही है, जिसे आम जनता आसानी से समझ सके और जो नागरी व उर्दू दोनों लिपियों में लिखी जा सके। वह भाषा है हिन्दुस्तानी।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा दुनिया के सभी धर्मों से चुनी हुई, ज्ञान और आनन्द से भरी हुई कहानियों की एक सौ किताबों का जो सेट बच्चों के लिए तैयार कर रही है, यह उसकी दूसरी किस्त है। हर किताब की क़ीमत दो रुपये होगी।

बच्चों की कहानियां

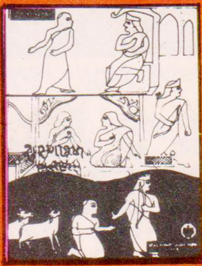

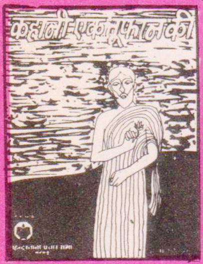

एकमात्र विक्रेता

एस. चंद एंड कंपनी

पो. बॉ. नं. ५७३३
रामनगर
नयी दिल्ली – ११० ०५५

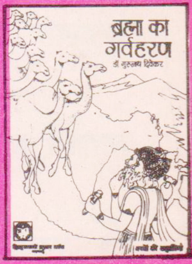

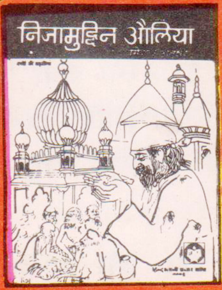

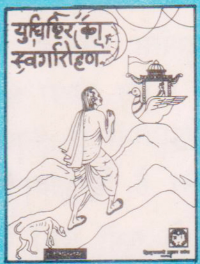

विलास खिरवडकर